RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2015-17

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

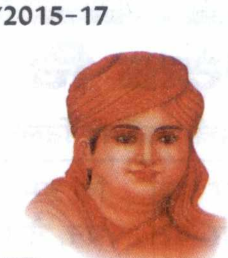

वर्ष: 74, अंक : 40 एक प्रति 2 : रुपये

रविवार 24 दिसम्बर , 2017

विक्रमी सम्वत् 2074, सृष्टि सम्वत् 1960853118

दयानन्दाब्द : 194 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये

आजीवन शुल्क : 1000 रुपये

दूरभाष : 0181-2292926, 5062726

E-mail: apspunjab2010@gmail.com,

www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष–74, अंक : 40, 21-24 दिसम्बर 2017 तदनुसार 10 पौष सम्वत् 2074 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

भगवान् परिश्रमी की रक्षा करते हैं

ले०-स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

यस्त इध्मं जभरत्सिष्विदानो मूर्धानं वा ततपते त्वाया।
भुवस्तस्य स्वतवाँः पायुरग्ने विश्वस्मात्सीमघायत उरुष्य।।

-ऋ० ४।२।६

शब्दार्थ-सिष्विदानः = पसीना-पसीना होता हुआ **यः** = जो **ते** = तेरे लिए **इध्मम्** = ईंधन, समिधा **जभरत्** = लाता है अथवा **ते** = तेरे **इध्मम्** = प्रकाश को **जभरत्** = धारण करता है **वा** = अथवा **त्वाया** = तेरा अभिलाषी होकर **मूर्धानम्** = माथे को **ततपते** = बार-बार तपाता है, हे **अग्ने** = सर्वरक्षक ! तू **तस्य** = उसका **स्वतवान्** = परनिरपेक्ष बलवान्, अपने बल से बली होता हुआ **पायुः** = रक्षक **भुवः** = होता है। हे प्रभो! तू **सीम्** = उसको **विश्वस्मात्** = सभी **अघायतः** = हानिकरों से **उरुष्य** = बचा।

व्याख्या-भगवान् ने अपना प्राकृतिक ऐश्वर्य जीवों को अर्पित कर रखा है। प्रकृति के एक भी अणु-परमाणु को वह अपने निजी स्वार्थ के लिए नहीं बरतता। वह जीवों को भोग-मोक्ष देने के लिए संसार का पसारा पसारता है। जीवों के कर्मों के अनुसार उनके लिए मानो नये-नये संसार बनाता रहता है। भोग में लिप्त होने वाले, कर्त्तव्यभ्रष्ट जीव को भोग से उठाने, उसे पुनः कर्त्तव्य-पथ पर लाने के लिए उसे बार-बार चेतावनी भी देता रहता है। इस तरह भगवान् मानो निरन्तर क्रियावान् है। स्वाभाविक है कि भगवान् की प्रीति भी उन्हीं के साथ हो सकती है, जो भगवान् के समान अपना सब-कुछ दे डालने वाले हों। जब कोई मनुष्य स्वार्थभावना से रहित होकर कोई शुभ कर्म करता है तो वह भगवान् का कार्य करता है, अर्थात् निष्काम-भाव से कर्म करना भगवान् के अर्पण करना है। इस प्रकार के कर्म करने वालों का रक्षक भगवान् होता है।

भगवान् की प्रीति-प्राप्ति के लिए भी स्वार्थत्याग करना आवश्यक है। कोई वस्तु किसी को देते समय अपने अभिमान के मर्दन के लिए मनुष्य को कहना चाहिए-'प्रभो! तेरी वस्तु तुझे देने लगा हूँ।' परिश्रम से की गई कमाई को जो भगवान् के मार्ग में दे डालता है, सचमुच भगवान् ही-**'भुवस्तस्य स्वतवाँ पायुः'** = उसके रक्षक होते हैं। रक्षा करने के लिए भगवान् को किसी अन्य शक्ति की सहायता की अपेक्षा नहीं हुआ करती, वह **'स्वतवान्'** स्वबल से बलवान् है।

पापों का मूल स्वार्थ है। जिसने स्वार्थ त्याग दिया, जो अपने लिए समिधा नहीं लाता वरन्-**'यस्त इध्मं जभरत्'** = जो तेरे लिए समिधा लाता है, जो बार-बार-**'इदं न मम'** = [यह मेरा नहीं है] कहता है, उससे पाप की सम्भावना कैसे? अथवा **'सिष्विदानो मूर्धानं वा ततपते त्वाया'** = पसीना-पसीना होता हुआ तेरा अभिलाषी होकर माथे को बार-बार तपाता है। मूर्धा को भगवान् के लिए तपाना बड़ा विकट कार्य है। इसमें मनुष्य पसीना-पसीना हो जाता है। किसी साधक से पूछो, कितना माथा तपता है, कितना पसीना आता है। इतना परिश्रम करने पर वह अपनी रक्षा से बेसुध हो जाता है, अतः भगवान् से प्रार्थना करता है-**'विश्वस्मात्सीमघायत उरुष्य'** = उसे सभी अनिष्टों से, हानि करने वालों से बचा। भक्त की रक्षा भगवान् के सिवा कौन कर सकता है? अतः प्रभो! तू ही उसकी रक्षा कर। **'अवितासि सुन्वतो वृक्तबर्हिषः'** = [ऋ० ८।३६।१] घर-द्वार छोड़ चुके हुए, निराश्रय याज्ञिक का तू ही रक्षक है। घर बार छोड़कर भी जो यज्ञ करता है, वह अवश्य भगवदाश्रित ही होता है। शरणार्थी की रक्षा तो भगवान् की टेक है। भगवान् से रक्षित सदा-सर्वथा निर्भय एवं निरापद रहता है। इसलिए प्रत्येक उपाय द्वारा भगवान् से रक्षा की प्रार्थना करनी चाहिए।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

इन्द्र क्रतुं न आभर पिता पुत्रेभ्यो यथा।
शिक्षाणो अस्मिन् पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि।।

-ऋ० ७.३२.२६

भावार्थ-हे सर्वशक्तिमन् इन्द्र! हमें ज्ञानी और उद्यमी बनाओ, जैसे पिता पुत्रों को ज्ञानी और उद्योगी बनाता है। ऐसे हम भी आपके पुत्र ब्रह्मज्ञानी और सत्कर्मी बनें ऐसे प्रेरणा करो। हे भगवान्! हम अपने जीवन काल में ही, आपके कल्याण कारक ज्योतिस्वरूप को प्राप्त होकर, अपने दुर्लभ मनुष्य-जन्म को सफल करें। दयामय परमात्मन्! आपकी कृपा के बिना न हम ज्ञानी बन सकते हैं, न ही सुकर्मी, अतएव हम पर आप कृपा करें कि हम आपके पुत्र ज्ञानी और सत्कर्मी बनें।

विशां राजानमद्भुतमध्यक्षं धर्मणामिमम्।
अग्निमीळे स उ श्रवत्।।

-ऋ० ९.४३.२४

भावार्थ-परमात्मदेव राजा और धार्मिक कामों के फलप्रदाता हैं, अपने पुत्रों की प्रेमपूर्वक की हुई स्तुति प्रार्थना को बड़े प्रेम से सुनते हैं। हे जगत् पिता परमात्मन्! मेरी टूटे-फूटे शब्दों से की हुई प्रार्थना को आप अवश्य सुनें। जैसे तोतली वाणी से की हुई बालक पुत्र की प्रार्थना को सुनकर पिता प्रसन्न होता है, वैसे आप भी हम पर प्रसन्न होवें।

शिक्षा और नैतिकता पर वैदिक चिन्तन : आधुनिक सन्दर्भ में

ले.-आचार्य सोमेन्द्र श्री रिसर्च स्कॉलर दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

आधुनिक सन्दर्भ में प्रस्तुत विषय की नितान्त आवश्यकता है। शिक्षा में नैतिकता के बिना मानवीय मूल्यों का ह्रास दिन-प्रतिदिन दिखायी दे रहा है। शिक्षा का मात्र उद्देश्य रोजी रोटी तथा व्यवसाय प्राप्त करना ही न होकर बालक का सर्वांगीण विकास करना है। शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक विकास से ही सर्वोन्नति सम्भव है। शिक्षा का उद्देश्य है-**'सा विद्या या विमुक्तये'** अर्थात् विद्या वह है जो हमें सब प्रकार के दु:खों से विमुक्ति दिलवाए। इसलिए ऋग्वेद का ऋषि कहता है-**'मनुर्भव'** मनुष्य बनो। मानवीय गुणों-प्रेम, दया, सहानुभूति, त्याग, सेवा परस्पर सहयोग भावना, उत्तमोत्तम् आचरण शिक्षा, विद्या इत्यादि शुभ श्रेष्ठ गुणों द्वारा ही मनुष्य का निर्माण सम्भव है। इसी के द्वारा समाज एवं राष्ट्र को भी मंगलमय बनाया जा सकता है। शिक्षा का वैदिक आदर्श है-**सहनाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै।** इस मन्त्र में शिक्षा के पाँच उद्देश्य बताये हैं-शारीरिक विकास, जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति, सबका विकास, धर्म संस्कृति सभ्यता के प्रति उदात्त भावना, द्वेष भावना के स्थान पर गुरू शिष्य का आपसी सहयोग। इसी उद्देश्य को सामने रखकर शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है। ज्ञान, भक्ति और निष्काम कर्म शिक्षा के मूल तत्व है। यम और नियम के द्वारा भी समानता व एकरूपता की प्राप्ति की जा सकती है। वेद की उदात्त विचारधारा द्वारा विश्वबन्धुत्व, विश्वशान्ति समष्टि भावना, भद्रभावना, आशावाद, निर्भयता, श्रद्धा, सामंजस्य को प्राप्त किया जा सकता है। शिक्षा का वैदिक नैतिक रूप इस वाक्य में दिग्दर्शित किया गया है -**''मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद''** जब तीन उत्तम माता-पिता और आचार्यगण होते हैं, तभी मनुष्य ज्ञानवान् बनता है। वैदिक वाङ्मय की उन्नति में राजा राममोहनराय द्वारा स्थापित ''ब्रह्मसमाज'' और स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित ''आर्य समाज'' ने विशेष सक्रिय कार्य किया है। ब्रह्मसमाज का ध्यान भारतीय-गौरव रक्षा के लिए उपनिषदों की ओर रहा है और आर्य समाज ने वैदिक साहित्य पर बल दिया। यह नि:संकोच कहा जा सकता है कि आधुनिक समय में वैदिक साहित्य एवं शिक्षा पर जो कुछ कार्य हुआ है उसमें आर्य समाज का स्थान अग्रगण्य है।

शिक्षा के ध्येय एवं उद्देश्य के विषय में विचार करते समय हम नि:सन्देह यह कह सकते हैं कि अन्त:शक्तियों को समुचित रूप में विकसित कर देना ही शिक्षा का प्रथम एवं अन्तिम ध्येय है। इसी आदर्श को हृदयंगम कर वैदिक ऋषि अपनी शक्तियों के विकास के लिए परमात्मा से प्रात: सायं इस प्रकार से प्रार्थना किया करते थे-ईश्वर! हमारी बुद्धि को सद्मार्ग में प्रेरित करो-**''धियो यो न: प्रचोदयात्''** हे अग्निदेव! आप हमें सद्मार्ग से विश्व में ले चलें, ले ही न चले, अपितु आप हमारे हृदयों से दुर्गुण एवं पाप भावनाओं को निकालकर निष्पाप तथा शुद्ध पवित्र बुद्धि प्रदान करें; इसके लिए हम पुन: आपकी प्रार्थना करते हैं-

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानिविद्वान्।

युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम: उक्ति विधेम।।

वैदिक ऋषि पवित्र भावभूमि पर स्थित होकर पुन: बुद्धि को मेधावी बनाने के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता है-

यां मेधां देवगणां पितरश्चोपासते

तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु।

इस प्रकार बुद्धि को मेधावी बनाने के लिए ही प्रार्थनाएं नहीं की जाती थीं, अपितु उस बुद्धि को पवित्र एवं कालुष्य रहित बनाने के लिए भी-

पुनन्तु मां देवजना पुनन्तु मनासाधिय:

पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेद पुनीहि मा।।

इस प्रकार वैदिक शिक्षा का मूल आधार मानव की बुद्धि का परिष्कार कर सुपथ का दर्शन कराना था; वस्तुत: यही प्राचीन शिक्षा का ध्येय था। क्या आज की शिक्षा में कहीं भी इस प्रकार का पाठ्यक्रम निर्धारित है जो बुद्धि को मानवता के मार्ग का पथिक बना सके जिससे कि हम उच्च स्वर से आयु, प्राण, धन, तेज को प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करना न भूलें-

तेजोऽसि तेजोमयि धेहि
वीर्यमसि वीर्यमयि धेहि
बलमऽसिबलं मयि धेहि
सहोऽसि सहोमयि धेहि

प्राचीन काल में **'सत्यं शिवं सुन्दरम्'** के अनुसार विश्व की कल्याण कामना ही वैदिक संस्कृति का प्रयोजन था। उसकी सिद्धि के लिए ऐहिक एवं पारलौकिक उन्नति करते हुए ब्रह्म के स्वरूप में भारतीय निमग्न हो जाते थे। वह ब्रह्म तप से प्राप्त होता था-**'ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते', 'तपसा चीयते ब्रह्म'** तथा तप की कसौटी के रूप में यम-नियमों का पालन करने के लिए एक निर्देश प्रत्येक विद्यार्थी को तो दिया जाता था; साथ ही मानव मात्र को इनका पालन करना आवश्यक था। यम के अन्तर्गत-**''तत्राऽहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहा यम:''**, तथा नियमों में **''शौच सन्तोषस्तप: स्वाध्यायेश्वर प्राणिधानानि नियमा:''** अर्थात् अहिंसा, सत्य अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह तथा मन, वचन, कर्म में पवित्रता शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्राणिधान। इन यम एवं नियमों की उपयोगिता, महत्व एवं अनिवार्यता के विषय में कुछ कहना उचित न होगा, वस्तुत: ये मानव को पूर्ण मानव बनाने के साधन थे। इनका आज के छात्र समाज में पूर्णत: अभाव-सा ही दृष्टिगोचर हो रहा है। जिस ब्रह्मचर्य का पालन कर देवताओं ने इच्छा मृत्यु प्राप्त की थी, उसका भी धवल यश वैदिक साहित्य में गाया गया है-

''ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत:

मरणं बिन्दु पातेन जीवनं बिन्दु धारणात्।''

चरित्र की भी प्रशंसा की गई है कि चरित्र से रहित मनुष्य मृतप्राय: ही है-

'अक्षीणो वित्तत: क्षीणो वृत्ततस्तु हतो हत:'

इस प्रकार प्राचीन निर्देशों के अनुसार हम कह सकते हैं कि प्राचीन छात्र व्रती एवं तपस्वी बनकर शिक्षोपार्जन किया करते थे।

प्राचीन काल की शिक्षा में मूल श्रद्धा की भावना थी; किन्तु आज के छात्र समाज में उसका पूर्णत: अभाव है। वस्तुत: मानव जीवन की सफलता के लिए विभिन्न तत्वों में श्रद्धा का प्रधानतम स्वार्थ है। श्रद्धा से समस्त कार्य अनायास ही सम्पन्न हो जाते हैं। श्रद्धा की भावना अपने गुरुजनों को वश में करने का सर्व-सुलभ साधन है-

श्रद्धयाग्नि: समिध्यते श्रद्धया हूयते हवि:

श्रद्धा भगस्य मूर्धनि वचसा-वेदयामसि।

श्रद्धा भावना जब ऐश्वर्य तथा कल्याण की प्रदाता है तो क्या आज के छात्रों में श्रद्धा की भावना संचार होने पर गुरु प्रदत्त शिक्षा जीवनोपयोगी नहीं हो सकती है? अवश्य हो सकती है। आज शिक्षा के क्षेत्र में फैली विश्रृंखलता के कारण छात्रों में श्रद्धा का अभाव है। वस्तुत: श्रद्धा ज्ञानार्जन का मूलतन्त्र है, जिस श्रद्धा की भावना ने नचिकेता में यम के मुख में जाकर प्रश्न करने के साहस का संचार किया था। ज्ञानार्जन करने में नचिकेता को समर्थ बनाया था। क्या वही श्रद्धा आज की शिक्षा में जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन नहीं करा सकती। संसार में श्रद्धाहीन मानव सदा से पददलित होते आये है। उनका सदा विनाश हो रहा है आज विनाश से बचने के लिए छात्र समाज को श्रद्धालु बनाने का उपाय करना चाहिए। लेकिन हम देखते क्या हैं आज का छात्र, माता, पिता एवं गुरूजनों के प्रति पूर्णत: अवज्ञा की भावना को लिए सदैव तिरस्कृत-सा करता है। यही कारण है कि उन्हीं गुरूजनों से प्रदत्त शिक्षा छात्र के लिए अभिशाप बनकर दु:खदायी ही सिद्ध हो रही हैं। अत: छात्रों को तपानुष्ठान का आचरण करके श्रद्धाशील बनना चाहिए। वेद के शब्दों में वह व्रतपालन से ही सम्भव है-

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षामाप्नोति दक्षिणाम्।

दक्षिणाश्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते।।

अर्थात् व्रत से दीक्षा, दीक्षा से दक्षिणा, दक्षिणा से श्रद्धा, श्रद्धा से सत्य। इस प्रकार क्रमश: मानव को सुपथ पर ले जाने के लिये यह एक पद्धति वेद में निर्दिष्ट है। इसका

(शेष पृष्ठ 7 पर)

सम्पादकीय

श्रद्धा व संकल्प की प्रतिमूर्ति- स्वामी श्रद्धानन्द

महर्षि दयानन्द जी के पश्चात आर्य समाज के कार्यों को जिन लोगों ने आगे बढ़ाया उनमें स्वामी श्रद्धानन्द जी की नाम बहुत ही आदर के साथ लिया जाता है। स्वामी श्रद्धानन्द वास्तव में श्रद्धा के प्रतीक थे। उन्होंने जो संकल्प लिया उसे श्रद्धा के साथ पूरा करने के लिए अपने आपको न्यौछावर कर दिया। समर्पण एवं त्याग के साथ उन्होंने महर्षि दयानन्द के कार्यों को आगे बढाया। त्याग एवं समर्पण की भावना का ज्वलन्त उदाहरण स्वामी श्रद्धानन्द जी ने अपने जीवन से प्रस्तुत किया। स्वामी श्रद्धानन्द जी जब लाला मुन्शीराम के रूप में आर्य समाज के कार्यक्षेत्र में उतरे तो बड़े से बड़ा त्याग करने और बलिदान देने से पीछे नहीं हटे। इसी समर्पण एवं श्रद्धा के कारण उन्हें महात्मा मुन्शीराम के रूप में लोग जानने लगे तथा सन्यास के पश्चात स्वामी श्रद्धानन्द नाम धारण किया।

ऋग्वेद के दसवें मण्ड़ल के १५१वें श्रद्धा सूक्त में एक बड़ा ही उत्तम वेद वाक्य है–

श्रद्धा हृदय्याकूत्या श्रद्धया विन्दते वसून्।

अर्थात् हृदय में अटूट श्रद्धा व संकल्प शक्ति को धारण करके श्रद्धा के द्वारा धन वैभव प्राप्त हो सकता है। वास्तव में यदि देखा जाए तो जो कुछ भी कार्य इस सृष्टि में किया जाता है उसकी सफलता का आधार श्रद्धा व संकल्प शक्ति ही है। दुनिया का कठिन से कठिन कार्य भी श्रद्धा और संकल्प शक्ति से सरल बन जाया करता है और सभी सांसारिक व पारलौकिक सुखों की प्राप्ति सम्भव है। दर्शन शास्त्रों में भी धर्म-अर्थ-काम- मोक्ष को पुरूषार्थ चतुष्टय कहा गया है। अर्थात् सब प्रकार के कार्यों में पुरूषार्थ प्रमुख है।

स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का कार्यक्षेत्र हमेशा से ही श्रद्धा और विश्वास पर आधारित रहा है। जीवन के प्रथम चरण में जब मुन्शीराम ने स्वामी दयानन्द सरस्वती के दर्शन नहीं किए थे तब तक वे आस्थाहीन यहां-वहां भ्रमण करते रहे। बरेली में मुन्शीराम का स्वामी दयानन्द से प्रथम साक्षात्कार हुआ तो उसी क्षण उनके जीवन में परिवर्तन की शुरूआत हुई। मुन्शीराम वकालत कार्य करते हुए भी प्रसन्नतापूर्वक उस व्यवसाय के दुर्गुणों से बचते रहे और जब उन्होंने स्वामी दयानन्द के मिशन की पूर्ति के लिए कदम आगे बढ़ाया तो फिर यह ध्यान ही नहीं रहा कि मेरा व्यवसाय क्या है। सब व्यवसायात्मक कार्यों को पूरा करके शिक्षा के क्षेत्र में सूत्रपात किया। कौन जानता था कि उनके द्वारा लगाया गया कांगडी गांव में वह छोटा सा पौधा एक दिन विशाल व सुदृढ़ वटवृक्ष का स्थान ले लेगा और अनेक ज्ञानपिपासु पथिक उसकी अमृतमय छाया को प्राप्त कर तृप्ति का अनुभव करेंगे। स्वामी श्रद्धानन्द के अन्दर गुरूकुल के लिए कितनी श्रद्धा थी, इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि उन्होंने गुरूकुल के लिए अपनी सम्पत्ति का दान तथा उससे भी बढ़कर गुरूकुल कांगड़ी के लिए सर्वप्रथम अपनी सन्तानों का दान कर दिया। ये दो बातें सिद्ध करती हैं कि स्वामी श्रद्धानन्द अपने संकल्प पर कितने दृढ़ थे।

श्रद्धा उत्पादन सरल कार्य नहीं है। सामान्यतया प्रत्येक कार्य ही श्रद्धाप्लावित होकर पूर्ण होता है। परन्तु वेद का मन्त्र इसे और भी स्पष्ट करता है-

व्रतेन दीक्षामाप्नोति, दीक्षया आप्नोति दक्षिणाम्, दक्षिणा श्रद्धां आप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते।।

अर्थात् श्रद्धा प्राप्ति से पूर्व दो वस्तुओं का होना अनिवार्य है, व्रत और दीक्षा। बिना निश्चयात्मक शक्ति तथा कुशलता के हम कोई भी कार्य पूर्ण नहीं कर सकते। फिर स्वामी श्रद्धानन्द जैसे तमाम महापुरूषों ने तो पराक्रम तथा यश व विशालता से परिपूर्ण अनेक कार्य किए। स्वामी श्रद्धानन्द का सम्पूर्ण जीवन श्रद्धा से परिपूर्ण रहा है। स्वामी श्रद्धानन्द का सारा जीवन इसी को केन्द्रबिन्दु बनाकर चारों ओर घूमता है। सन्यास ग्रहण करते समय स्वयं उन्होंने यह बात स्वीकार की थी और कहा था कि आज तक मैं सारा जीवन ऋषि दयानन्द के चरणों में बिताने का प्रयास करता रहा हूं। इसीलिए मैं अपना नाम स्वामी श्रद्धानन्द रखना चाहता हूं। ऋषि चरणों में अपनी अगाध श्रद्धा को अभिव्यक्त करते हुए 1925 ई. में मथुरा जन्म शताब्दी के अवसर पर जो भावपूर्ण श्रद्धाजंलि स्वामी जी ने अर्पित की थी, उसका एक-एक शब्द हृदय वीणा के तारों को छूने वाला है-

ऋषिवर! तुम्हें भौतिक शरीर त्यागे 41 वर्ष हो गए हैं परन्तु तुम्हारी दिव्य मूर्ति मेरे हृदय पटल पर अब तक ज्यों की त्यों अंकित है। मेरे निर्बल हृदय के अतिरिक्त कौन मरणधर्मा मनुष्य जान सकता है कि कितनी बार गिरते-गिरते तुम्हारे स्मरण मात्र ने मेरी रक्षा की है? तुमने कितनी गिरती हुई आत्माओं की काया पलट दी है? इसकी गणना कौन मनुष्य कर सकता है? बिना परमात्मा के जिनकी पवित्र गोद में तुम इस समय विचर रहे हो, कौन कह सकता है कि तुम्हारे उपदेशों से निकली अग्नि ने संसार में प्रचलित कितने पापों को दग्ध कर दिया है? परन्तु अपने विषय में कह सकता हूं कि तुम्हारे सहवास ने मुझे कैसी गिरती हुई अवस्था से उठा कर सच्चा जीवन लाभ करने योग्य बनाया है। मैं क्या था, क्या बन गया और अब क्या हूं, वह सब तुम्हारी कृपा का परिणाम है। भगवन्! मैं तुम्हारा ऋणी हूं, उस ऋण से मुक्त होना चाहता हूं। इसलिए जिस परमपिता की असीम गोद में तुम परमानन्द का अनुभव कर रहे हो, उसी से प्रार्थना करता हूं कि मुझे तुम्हारा सच्चा शिष्य बनने की शक्ति प्रदान करे!

स्वामी श्रद्धानन्द सच्चे अर्थों में युगपुरूष थे। वे जिधर को चलते थे समय उनके पीछे चलता था। जनता उनके संकेत पर चलने को कटिबद्ध थी। स्वामी श्रद्धानन्द ने सभी क्षेत्रों में ऋषि के मन्तव्यों, वचनों, लेखों तथा इच्छाओं को क्रियात्मक रूप देने का बीड़ा उठाया। ऋषि मन्त्रदाता थे तो स्वामी श्रद्धानन्द मन्त्र साधक थे। विदेशी शिक्षा प्रणाली के विरूद्ध आन्दोलन के रूप में उन्होंने गुरूकुल कांगड़ी की स्थापना की और इस युग में एक बार पुन: ब्रह्मचर्याश्रम पद्धति के आदर्श को सजीव कर दिया। आर्य जाति की रक्षा के लिए भी उन्होंने प्रयास किया। धार्मिक तथा सामाजिक क्षेत्र के साथ-साथ स्वामी श्रद्धानन्द ने राजनीति के क्षेत्र में भी श्रद्धा और पूर्ण विश्वास के साथ कार्य किया। उनकी राजनैतिक गतिविधियां भी उतनी ही प्रभावशाली थी जितनी धार्मिक क्षेत्र की। राष्ट्र के स्वाधीनता आन्दोलन के इतिहास में उनका स्थान एक यशस्वी और सेनानायक के रूप में सुरक्षित है। गोरे शासकों के क्रूर अत्याचारों से आतंकित पंजाब कांग्रेस का अधिवेशन बुलाने का किसी में साहस नहीं हुआ तो स्वामी श्रद्धानन्द जी मैदान में उतरे और अमृतसर में कांग्रेस का ऐतिहासिक अधिवेशन आयोजित किया। वे स्वयं इस अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष बनें और अपने साहस, परिश्रम और श्रद्धा से इस कार्यक्रम को सफल किया।

ऐसे श्रद्धा की साक्षात् मूर्ति और युगपुरूष स्वामी श्रद्धानन्द का बलिदान दिवस मनाते हुए हम भी उनके श्रद्धामय जीवन से शिक्षा लेकर मानवता के कार्य करें। स्वामी श्रद्धानन्द ने सम्पूर्ण जीवन मानवता के लिए कार्य किया। अपनी संस्कृति, सभ्यता और मातृभूमि के लिए उन्होंने अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया। स्वामी श्रद्धानन्द जी सम्पूर्ण जीवन प्रेरणाओं से भरा हुआ है। स्वामी श्रद्धानन्द एक सच्चे कर्मयोगी थे। महात्मा गांधी जी ने स्वामी श्रद्धानन्द जी को श्रद्धाजंलि देते हुए कहा था कि स्वामी श्रद्धानन्द जी एक सुधारक थे। कर्मवीर थे, वाक्शूर नहीं। उसका जीवन जागृत विश्वास था। इसके लिए उन्होंने अनेक कष्ट उठाए थे। वे संकट आने पर कभी घबराए नहीं थे। वे एक वीर सैनिक थे। वीर सैनिक रोग शय्या पर नहीं, किन्तु रणांगन में मरना पसन्द करता है। ऐसे वीर पुरूष को श्रद्धाजंलि देते हुए हम भी उनकी तरह कर्मवीर बनें तथा राष्ट्र को एक नई दिशा प्रदान करें।

प्रेम भारद्वाज
सम्पादक एवं सभा महामन्त्री

वेद में विभिन्न रोगों का निदान

ले.-डॉ. अशोक आर्य १०४ शिप्रा अपार्टमेन्ट, कौशाम्बी २०१०१० गाजियाबाद

स्वामी दयानंद सरस्वती ने आर्य समाज के प्रथम नियम में यह कहा है कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। स्वामी जी वेद के स्वाध्याय को केवल धर्म ही नहीं मानते किन्तु स्वामी जी इसे परम धर्म मानते हैं। इस का कारण भी है और वह यह कि परम पिता परमात्मा ने प्राणी मात्र के कल्याण के लिए सृष्टि के आरम्भ में वेद के इस ज्ञान को दिया था। सृष्टि के आरम्भ में दिया ज्ञान उस प्रभु का सीधा ज्ञान होने के कारण सदा सर्वश्रेष्ठ ज्ञान होता है। इसी से ही सब का कल्याण संभव होता है।

वेद के इस ज्ञान में विश्व के सब प्रकार के ज्ञानों को समाविष्ट किया गया है। सब ज्ञानों में से एक ज्ञान चिकित्सा शास्त्र को भी माना गया है। इसलिए ईश्वर प्रदत ज्ञानों में से एक चिकित्सा विज्ञान भी एक महत्वपूर्ण विज्ञान है। यह एक ऐसा विज्ञान है जिस के प्रयोग से न केवल मानव अपितु सब प्राणियों को स्वस्थ व निरोग रखते हुए, उनकी आयु को बढ़ाने का कार्य करता है। यदि कभी किसी प्राणी को कोई रोग हो जावे तो इस विज्ञान की सहायता से उसके रोग का निदान करने में सहायता करता है। इस प्रकार उसे पुन: स्वस्थ कर उस प्राणी को पुन: स्वस्थ व प्रसन्न जीवन जीने का अवसर प्रदान करता है। इस सब का माध्यम सदा एक चिकित्सक ही होता है। इस कारण ही समाज में चिकित्सक को बहुत ही सम्मान पूर्ण स्थान मिला है तथा उसका आदर सत्कार करने से कोई भी पीछे नहीं रहता।

चिकित्सा के सम्बन्ध में ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद में जब हम इस सम्बन्ध में कुछ खोजने का प्रयास करते हैं तो हम पाते हैं कि इन तीन वेदों में चिकित्सा सम्बन्धी अत्यधिक ही नहीं अपितु गहन चिंतन हुआ है तथा चिकित्सा के सम्बन्ध में इन तीन वेद में एक हजार से भी अधिक मन्त्र हमें प्राप्त होते हैं। जब भी चिकित्सीय विमर्ष किया जाता है तो यह आवश्यक हो जाता है कि इन तीन वेदों में वर्णन दिये गए इन एक हजार मंत्रो को देखा जावे, इन पर मनन चिंतन किया जावे किन्तु यह सब करने से पूर्व मानव शरीर की रचना तथा इसकी कार्य प्रणाली पर भी विचार आवश्यक हो जाता है। जब तक हम मानव शरीर की रचना तथा इसकी कार्य प्रणाली को नहीं जानेंगे समझेंगे तब तक हम इस के किसी भी रोग के निदान के लिए ठीक से चिकित्सा नहीं कर सकते। इसलिए सर्व प्रथम इस सब को समझना आवश्यक हो जाता है। शरीर रचना व इसकी कार्य प्रणाली को समझने के पश्चात् हम इस शरीर में आये रोग के कारणों को जानने का प्रयास करते हैं। जो रोग आया है, उसके लक्षण क्या हैं, इसे भी समझने का यत्न करते हैं। इस रोग का निदान किस प्रकार संभव हो सकता है? इस तथ्य को भी विचारना आवश्यक होता है। इन सब बिन्दुओं पर विचार के पश्चात् ही रोग का निदान संभव हो पाता है। अत: आओ हम मिलकर इन सब बिन्दुओं पर चिंतन करें, विचार करें। मानव शरीर की रचना और कार्य प्रणाली ऋग्वेद और अथर्ववेद, यह दो वेद इस प्रकार के हैं, जिन में मानव शरीर की रचना तथा इस शरीर की कार्य प्रणाली पर एक से अधिक अर्थात् अनेक सूक्तों में वर्णन मिलता है। इस सम्बन्ध में विचार करते हुए सर्व प्रथम हम अथर्ववेद मन्त्र संख्या १०.२.१ पर विचार करते हैं।

मंत्र इस प्रकार है :

केन पार्ष्णी आभृते पूरुषस्य केन मांसं संभृतं केन गुल्फौ।
केनाङ्गुली: पेशिनी: केन खानि केनोच्छलङ्खौ मध्यत: क: प्रतिष्ठाम।। अथर्ववेद १०.२.१।।

मन्त्र हमारे शरीर के विभिन्न अंगों पर विचार करते हुए प्रश्न करता है कि हमारे शरीर के इन अंगों को, जिन से हम प्रतिदिन काम लेते हैं, पुष्ट कौन करता है? हमारी एडी को कौन पुष्ट करता है।

इस मन्त्र के माध्यम से एक प्रश्न किया गया है। प्रश्न ही नहीं किया गया अपितु उस आविष्कारक प्रभु का गुणगान किया गया है। मन्त्र कहता है कि वह कौन है, जिसने मनुष्य की एडियों को पुष्ट किया है? मनुष्य के शरीर का पूरा भार चलते समय एडी पर ही होता है। यदि हमारी एडी पुष्ट न हो, शक्तिशाली न हो, तो हम ठीक से चल ही नहीं सकते और चलने के बिना हमारे सब कार्य अधूरे रह जाते हैं। इसलिए हमारी एडी का पुष्ट होना आवश्यक होता है किन्तु मन्त्र हमारे से प्रश्न कर रहा है कि वह कौन है, जो हमारी एड़ियों को सदा पुष्टि देने का कार्य करता है? मांस कौन जोड़ता है

मांस प्रत्येक प्राणी के शरीर का एक आवश्यक भाग होता है। यदि शरीर पर मांस न हो तो हमारे शरीर पर केवल हड्डियां ही हड्डियां दिखाई देंगी। इन हड्डियों का दर्शन केवल बच्चों को ही नहीं बड़ों को भी भयभीत करने वाला होता है। यह हड्डियां इतनी कमजोर होती हैं कि किंचित से झटके से ही चटक जाती है और फिर इस शरीर से मांस मज्जा के बिना चलना फिरना और जीवन व्यापार का कार्य भी कैसे संभव हो पाता? इस से स्पष्ट है कि शरीर के संचालन में हड्डियों पर मांस का आवरण नहीं तो हड्डियों का यह ढांचा किसी काम का न होता। इसलिए हमारे शरीर पर मांस मज्जा का एक आवरण चढ़ाया गया है। यह आवरण ही इन्हें मजबूती हेता है। हड्डियों को पुष्टि देने वाला यह मांस हमारे शरीर पर किसने सजाया है? मन्त्र इस प्रश्न का भी उत्तर मांग रहा है।

शरीर के विभिन्न अंग किसने बनाए हैं

हमारा शरीर अनेक प्रकार के सुन्दर अंगों से सजा है। जैसे हमारी टांगों को बल प्रदान करने वाले सुन्दर टखने, हमारे शरीर के कार्य संचालन के लिए बड़ी ही सुन्दर अंगुलियाँ, हमारे कार्य तथा हमारी आवश्यकता को अनुभव करने वाली यह हमारी इन्द्रियाँ, इतना ही नहीं यदि हमारे पावों के नीचे तलवे न होते तो हम भ्रमण भी कर पाने में असमर्थ होते, इन साफ सुंदर तलवों को, तलवों के साथ इस भूलोक के बीच आ कर हमने पाँव रखे, यहाँ भ्रमण करने लगे, घूम घूम कर इसकी ओषध व फल फूलों को चखने लगे। हमारे शरीर के यह सब अंग किसने बनाए हैं? कोई तो ऐसा कारीगर होगा, जिसने हमारे शरीर में यह सब सुन्दर सुन्दर अंग लगा दिए हैं।

इस प्रकार मन्त्र हमें उपदेश करते हुए पूछ रहा है कि हमारे शरीर की हड्डियां, पाँव की एडियाँ, टखने, अंगुलियाँ तथा पाँव के सुन्दर तलवे हमारे शरीर पर सजाने वाला कौन कारीगर है ? यह सब अपने आप तो हुआ नहीं, इसके लिए कोई तो निर्माता होगा, कौई तो निर्माण करने वाला होगा? मन्त्र संकेत करता है कि हमारे शरीर के यह सब अवयव बनाने वाला वह परम पिता परमात्मा ही हो सकता है, अन्त कोई नहीं। इसलिए उस प्रभु का हमें सदा स्मरण करना चाहिए।

पृष्ठ 8 का शेष-आर्य समाज जवाहर नगर...

में संस्कृत विषय में अपने महाविद्यालय में प्रथम पांच स्थान प्राप्त करने पर श्रीमती सुमित्रा देवी बस्सी द्वारा आरक्षित राशि से पारितोषिक एवं स्मृति चिन्ह देकर सम्मानित किया गया। आचार्य चन्द्रपाल जी ने कहा कि जीव हर समय सुख की तलाश में रहता है। सुख का आधार धर्म है, पर धर्म के आधार वेद एवं ईश्वर होने के कारण प्रभु से मित्रता कर उसकी आज्ञानुसार हमें कर्म व व्यवहार करना चाहिये तभी हम उसके आनन्द को प्राप्त कर सकेंगे। तर्क से जो सिद्ध होता है वह धर्म वेद ही है जिसे किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं। वेद का एकशब्द ही मनुष्य को जीवन सफल करने के लिये पर्याप्त है जैसे मनुर्भव।

आर्य समाज के प्रधान डा. विजय सरीन जी ने उत्सव की सफलता के लिये परम पिता का धन्यवाद किया। तदोपरान्त सभी विद्वानों, संगीतज्ञों तथा उपस्थित आर्य समाजों, शिक्षण संस्थाओं के सदस्यों के साथ साथ नगर के अन्य गणमान्य व्यक्तियों ने बहुसंख्या में उपस्थित होकर धर्म लाभ उठाया तथा उत्सव की शोभा को बढ़ाया। कार्यक्रम के उपरान्त दोपहर 1.00 बजे सभी ने मिल कर प्रेमपूर्वक ऋषि लंगर ग्रहण किया। आर्य समाज जवाहर नगर के उप प्रधान श्री राजेन्द्र बेरी, राजीव गुप्ता, संजीव गुप्ता, मंत्री बृजेश पुरी, अजय मोंगा, हरबंस लाल सहगल, ममता शर्मा, श्वेता सेतिया, वीना गुलाटी, निधि सरीन, सीता देवी, सरोज तथा इन परिवारों के बच्चों तथा अन्य सदस्यों ने बड़ी लग्न से कार्य किया। **-विजय सरीन प्रधान**

कुरीतियों का कुचक्र तोड़ना ही होगा

ले.-पं० उम्मेद सिंह विशारद वैदिक प्रचारक गढ़निवास मोहकमपुर देहरादून

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहवें सम्मुलास की अनुभूमिका में लिखते है कि जब तक इस मनुष्य जाति में परस्पर मिथ्या मतमतान्तर का विरूद्ध विद्वज्जन ईर्ष्या द्वेष छोड़ सत्यासत्य का निर्णय करके सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करना चाहे तो हमारे लिये यह बात असाध्य नहीं है।

यह निश्चिय है कि इन विद्वानों के विरोध ही ने सबको विरोध जाल में फंसा रखा है। यदि ये लोग अपने प्रयोजन में न फंस कर सबके प्रयोजन को सिद्ध करना चाहें तो अभी ऐक्यमत हो जायें। इसके होने की युक्ति इस की पूर्ति में लिखेंगे। सर्वशक्तिमान परमात्मा एकमत में प्रवृत्त होने का उत्साह सब मनुष्यों के आत्माओं में प्रकाशित करें।

इस लेख में मैने केवल सामाजिक मान्यताओं व दैनिक दिन चर्या में जिस-जिस मान्यताओं से समाज को हानि हो रही है। उन-उनका संकेत मात्र उल्लेख किया है जिनसे अन्धविश्वासों की परम्परा बनी रहती है। उस-उस मान्यताओं पर विचार करके समाज में व्याप्त रूढ़ियों को हटाने में अपना योगदान देने का कष्ट करें। कुप्रथाऐं और परम्परायें कोई ईश्वर का आदेश नहीं होती ये सभी सुख सुविधा तथा सुव्यवस्था के लिये समाज द्वारा बनाई जाती है। यदि हम सडी गली पुरानी रूढ़ियों की हानि उठा कर भी प्राचीनता के लोभ में अपनाते रहेंगे तो हम जमाने से पीछे रह जायेंगें कुप्रथाओं और कुपरम्पराओं को हर हाल में बदलना ही होगा, समय का यही तकाजा है।

भ्रान्तियां हटाये कुरीतियां मिटाये-अपने देश की अवनति में वैचारिक भ्रान्तियों की सबसे अधिक भूमिका रही है। महाभारत काल के बाद अन्धविश्वासों की मान्यताओं के कारण लम्बे समय तक देश गुलामी के जंजीरों में जकड़ा रहा है, और आज भी कायम है। जो कभी अपने स्वतंत्र प्रखर वैदिक मान्यताओं एवं दूरदर्शी चिन्तन के कारण अध्यात्म तत्व दर्शन का अन्वेषक माना जाता था, वही धार्मिक, सामाजिक मूढ़ मान्यताओं तथा कुपरम्पराओं का केन्द्र बन गया है। आज रूढ़ी मान्यताओं का रूप बदल रहा है। आर्य समाज व अन्य समाज सुधारक विचार धाराओं की संस्थाओं, व अनेत मत मतान्तरों के नेतृत्व को आज आगे आकर सत्य वैचारिक वैदिक मान्यताओं का प्रचार करना होगा।

प्रथा-परम्पराएं सोच समझ कर अपनाएं:-जन्म से लेकर मृत्यु तक व्यक्ति अपने समाज परिवार और कुल की निरधारित परम्पराओं का पालन करता है। प्रचलित परम्पराओं में कई तो ऐसी है जिनकी किसी काल में कोई उपयोगिता रही हो पर आज अनावश्यक हो गयी है। अपितु कलंक बन गयी है। उनको हटाना आवश्यक हो गया है।

हमारी अविवेकीय विचारशीलता ही कुरीतियां फैलाती है।

मान्यताओं और प्रथा परम्पराओं के सम्बन्ध में अधिकांश लोग अन्ध परम्पराओं के शिकार होते है और लकीर के फकीर बने रहते है। ऐसे पूर्वाग्रह उन्होंने अपने समीपवर्ती लोगों से सीखे होते हैं और अन्ध परम्पराओ को गले लगाकर रखते हैं। इसलिए आवश्यकता है, आर्षज्ञान प्राप्त करके प्रचलित कुरीतियां मिटाने की है।

अभिशाप जैसे प्रमुख कुप्रचलन:

हमारी समाज व्यवस्था में चार मौलिक दोष है। 1 वंश के आधार पर ऊंच नीच की मान्यता 2 वेश धारण करने भर से अज्ञानी, वेद विहीन को संत मान लेना। 3 कन्या और पुत्र में भेदभाव करना 14 विवाह में कन्या पक्ष का शोषण आदि इन कुरीतियों के रहते हम सभ्य समाज के सदस्य नहीं कहला सकते है।

दिशा-धारा मोडनी ही पड़ेगी गम्भीरता पूर्वक देखने और सोचने से ऐसा प्रतीत होता है कि समझदारो के ऊपर भी नासमझी सवार हो गई है। हम लाभ के साधन पर हानि ही अर्जित कर रहे है।

परम्पराओ में घुसी हुई आवांछनीयता:

विज्ञान ने अपनी प्रमाणिकता स्वतंत्र चिन्तन का सहारा लेकर की है। सत्य और वेद ज्ञान तथा सृष्टिक्रम को मानकर परम्पराओं को माना जाये तो कई अन्ध विश्वास व परम्पराये समाप्त हो सकती हैं।

विचित्र ये सामाजिक प्रचलन

क्या उचित है क्या अनुचित है, इसका निर्धारण वेद ज्ञान व विज्ञान के आधार पर किया जा सकता है। अस्तु उचित अनुचित के बीच अन्तर करते समय देशकाल एवं परिस्थितियों के आधार पर उपर्युक्त निर्धारण करना चाहिए।

परम्परा नहीं औचित्य देखें-

प्रचलनो प्रथाओं परम्पराओं में यदि औचित्य का समावेश न हो तो वो अन्धविश्वासों से जकड़ जाते है तथा अनगणित प्रकार की समस्याओं को जन्म देकर अनेकों प्रकार से अपने को और समाज को क्षति पहुंचाते रहते है तथा विकास क्रम को अवरूद्ध करते रहते है।

विवेकहीन कुप्रचलन-परम्पराये अच्छी व बुरी लोगों के मन में बस जाती है तथा विचार शक्ति में इतनी गुजांइश ही नहीं रहती कि उनके गुण दोषों पर विचार कर सकें कई बार तो अनुपयुक्त समझते हुए भी कुप्रथाओं को लोग कार्यान्वित करते हुए अपना बड़प्पन समझते है, और गलत परम्पराओं को प्रश्रय देते रहते हैं।

मृहूर्त से बड़ा विवेक-शुभ व अशुभ मुहूर्त के लिये समाज में बड़ा अज्ञान फैला हुआ है और शुभ अशुभ के चक्कर में समाज कई बार बड़ी हानि कर लेता है। देश काल परिस्थिति तथा ऋतु अनुसार, स्वास्थयनुसार जो भी समय हो वही हमारे लिये शुभ होता है। शुभ अशुभ प्रचलनो को नहीं औचित्य को मान्यता देनी चाहिए।

प्रत्येक पारिवारिक व सामाजिक उत्सवों के नाम पर दिखावा आवांछनीय है।

समाज में विवाह समारोहो में अनावश्यक आडम्बर किया जाता है। व्यर्थ प्रदर्शनों को बढ़ा-चढ़ा कर प्रस्तुत करना ही अपनी शान समझा जाता है। इसको रोकना होगा और उस व्यर्थ व्यय से जो धन बचेगा उसको अन्य रचनात्मक कार्यों में लगाना उपयुक्त है। सामाजिक कुरीतियां कैसे मिटे, तथा उन्हें प्रचलनों की कसौटी पर कंसे, और आवांछनीय मूढ़ मान्यताओं को उखाड़ फैंके। बड़े परिवर्तन के लिये बड़े प्रयास करने पड़ेंगे।

यह दृष्पवृत्ति निरोध आन्दोलन चलाना ही चाहिए।

हमें निम्न विषयों पर आन्दोलन करना होगा वह यह है जैसे 1. मांसाहार मांस व कटे हुए पशुओं का चमड़े का उपयोग। 2. नशेबाजी की बढ़ती प्रथा 3. प्रशु बलि 4. मृत्यू भोज 5. ऊंच नीच जाति को मानना 6. नारी तिरस्कार 7. बेईमानी 8. दहेज प्रथा 9. उत्सवों में अपव्यय 10. धार्मिक अन्ध विश्वास 11. असम्भयता 12. गुरूडम पूजा आदि-आदि। नव निर्माण की दिशा में उक्त सुधार आन्दोलन महत्वपूर्ण है। आर्य समाज एवं अन्य जो सुधारवादी विचारक संगठनों को आगे आना पड़ेगा।

पूर्वाग्रह कुरीतियों पर अडे रहना बुद्धिमता नहीं है।

मानव जगत में अधिकांश विचार शक्ति व्यर्थ की पूर्वाग्रह मान्यताओं पर चलती है जिसमें आपरा में विरोधाभास होता है। यह पूर्वाग्रह विचार कैसे उत्पन्न होते हैं। मेरी समझ से हम हिन्दू-मुसलमान, ईसाई, जैन, सिख, बौद्ध क्यों होते है, क्योंकि हमने उन-उन परिवारों में जन्म लिया रहता है, और उसकी मान्यताओं के संस्कार पैदा होते ही उस बालक पर डाल दिये जाते है, और वह मनुष्य आजीवन उसी विचारों पर चलता है एक प्रकार वह थोपे हुए मन्यता, एवं विचार होते है। उसी को मनुष्य अपना स्वाभिमान समझा कर आपस में टकराव होता है और सभी अपने-अपने पूर्वाग्रह विचारों को ही सत्य समझते है। विचार कीजिये इतिहास गवाह है, इन पूर्वाग्रहों ने मानव समाज का भयंकर अहित किया हुआ है।

समाधान-ईश्वर द्वारा प्राणी मात्र के लिये अन्य पदार्थों के साथ-साथ वेदों का ज्ञान भी दिया है, वेदों का ज्ञान सर्व कालिक, सार्वभौम, सर्व हितकारी, सत्य धर्म, सृष्टि क्रमानुसार विज्ञान के अनुसार सबके लिये समान रूप से है। बस यही सुख शान्ति का मार्ग है। यह एक ऐसी स्टेज है जहाँ पर सभी पूर्वाग्रह अवैदिक विचार समाप्त होते है। यह नितान्त सत्य है मानव जगत में सम्पूर्ण सुख शान्ति, तभी प्राप्त हो सकेगी जब संसार वैदिक धर्म के मार्ग पर चलेगा। यह लेख संक्षिप्त विवेकहीन कुविचारों का संकेत मात्र है। मानव समाज में व्याप्त व्यर्थ की मान्यताऐं तभी समाप्त होगी जब मनुष्य मात्र ईश्वरीय वेद ज्ञान की शिक्षाओं पर चलेगा।

दयानन्द स्कूल लुधियाना के 325 बच्चों को बांटे स्वैटर

दयानन्द पब्लिक स्कूल दीपक सिनेमा रोड लुधियाना में पढ़ने वाले 325 बच्चों को स्वैटर वितरित किये गये। यह सेवा कार्य सर्दी के मद्देनजर किया गया है। इस मौके पर प्रबन्धक कमेटी के मनीष मदान, गोपाल कृष्ण अग्रवाल, संत कुमार व प्रिंसीपल निर्मल कांता, फैंसी एंटरप्रिन्योरशिप के मनोज टोडी का आभार व्यक्त किया। उन्होंने कहा कि हमारी संस्था मनोज टोडी द्वारा किये गये मानवता व कल्याणार्थ कार्यों के लिये सदैव उनकी ऋणी रहेगी। प्रिंसीपल जी ने कहा कि यह सब हमारे माननीय श्री गोपाल कृष्ण अग्रवाल जी की प्रेरणा एवं सहयोग का ही सफल है। प्रधान श्री संत कुमार जी ने श्री टोडी जी का और श्री अग्रवाल जी का हार्दिक धन्यवाद किया और उनके व्यापार में अधिक वृद्धि के लिये सामूहिक मंगल कामना की गई।

बलिवैश्वदेव यज्ञ की अनिवार्यता व उसका स्वरूप

ले.-मनमोहन कुमार आर्य, 196 चुक्खूवाला-2 देहरादून-248001

यज्ञ परोपकार के कार्यों को कहते हैं। यज्ञ ऐसा कार्य व कर्म है जिससे अपना भला होता है व दूसरों को भी लाभ पहुंचता है। हमारा भला दूसरों का भला करने से ही हो सकता है, दूसरों को हानि पहुंचा कर हमारा भला कभी नहीं हो सकता। इसका कारण यह है कि यह प्रकृति व सृष्टि सच्चिदानन्द-स्वरूप ईश्वर की बनाई हुई है। यह सृष्टि ईश्वर की जीवात्मारूपी-प्रजा जो मनुष्यों सहित अनेकानेक अगणित योनियों में है, के सुखोपभोग के लिए है। हमें सभी जीवात्माओं वा प्राणियों के जीवनयापन में सहयोग करना है। यदि हम सहयोग करते हैं तो यह भी एक यज्ञ है। यदि हम प्राणीमात्र के जीवनयापन में सहयोग के स्थान पर उसके विरोधी बनते हैं तो यह यज्ञ न होकर हानिकारक कर्म है जिसकी हानि हमें ईश्वरीय दण्ड के रूप में होती है। यज्ञ के बारे में ब्राह्मण ग्रन्थ कहते हैं यज्ञ देवपूजा, संगतिकरण व दान का पर्याय है। देवपूजा का अर्थ है चेतन व जड़ देवताओं की पूजा वा सत्कार। चेतन देवताओं में ईश्वर, माता, पिता, विद्वान आचार्य व अन्य मनुष्य आदि सहित सभी प्राणी भी आते हैं। इन सबका यथायोग्य सत्कार देवपूजा होती है। जड़ पूजा में मुख्यत: पंचमहाभूत व अन्य दैवीय शक्तियों की पूजा आती हैं। इनकी पूजा उनका सन्तुलन न बिगड़ने देना, इसका ध्यान रखना और सन्तुलन बनाये रखने के प्रति सावधान रहना व इसके लिए आवश्यक क्रियायें करना ही जड़ देवों की पूजा है। चेतन व जड़ देवों की पूजा हेतु ऋषि दयानन्द जी ने पंचमहायज्ञविधि का विधान किया है। ब्रह्मयज्ञ वा सन्ध्या ईश्वर की उपासना व पूजा है। देवयज्ञ अग्निहोत्र ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना सहित उसकी पूजा एवं सभी जड़ देवों की पूजा का कृत्य व कर्म है। सन्ध्या से तो उपासक को ही लाभ होता है परन्तु देवयज्ञ से वायु व वृष्टि जल सहित सभी प्राकृतिक भौतिक देवों को लाभ पहुंचता है व वह पुष्ट व समर्थवान बने रहते हैं व बनते हैं।

ईश्वर ने इस सृष्टि को बनाकर यज्ञ किया है। वह सूर्य की किरणें पृथिवी पर भेज कर, उसके माध्यम से प्रकाश व ऊर्जा प्रदान कर, वायु बहाकर व जल की वृष्टि करके व अनेकानेक कार्य करके एक प्रकार का यज्ञ ही कर रहा है। हमारा यह यज्ञ उस वृहद यज्ञ का ही एक छोटा रूप है जिससे अनेकानेक लाभ होते है जिनका ज्ञान सत्यार्थप्रकाश सहित वेद व ऋषियों के अन्य ग्रन्थों का अध्ययन कर किया जा सकता है। पंच महायज्ञ विधि में ऋषि दयानन्द जी ने पितृ यज्ञ, अतिथि यज्ञ एवं बलिवैश्र्वदेव यज्ञ का भी विधान कर उसकी विधि दी है। पहले चार यज्ञों में ईश्वरोपासना, देवयज्ञ में चेतन व जड़ पदार्थों का यज्ञ, पितृ व अतिथि यज्ञ में माता-पिता आदि वृद्धों सहित आचार्यों व ऋषियों आदि का सम्मान द्वारा यज्ञ हो जाता है। पांचवा यज्ञ मुख्यत: मनुष्येतर प्राणियों के लिए किया जाता है जिससे उन्हें सुखपूर्वक अपने जीवनयापन में किसी प्रकार की भी बाधा न आये अपितु सभी मनुष्यादि उसमें सहायक बनें। इस विषय पर विचार करते हैं तो हमें यह ज्ञात होता है कि ईश्वर ने यह सृष्टि न केवल कुछ व्यक्तियों के लिए अपितु अपनी समस्त जीव रूप प्रजा के लिए बनाई है। सभी जीवों का ईश्वर की सृष्टि पर समान अधिकार है। ईश्वर सभी जीवों को उनके कर्मानुसार भिन्न-भिन्न योनियों में कर्म करने व फल भोगने के लिए भेजता है। वहां उन्हें उनके जीवनयापन व कर्म भोग में सहायता के लिए अनुकूल वातावरण मिलना चाहिये। ईश्वर तो उन्हें जीवन देने व उनका पालन करने में सहयोगी है ही, सभी मनुष्यों को भी उनके जीवनयापन में सहयोगी होनाचाहिये।

यही बलिवैश्वदेव यज्ञ का महत्व व प्रयोजन ज्ञात होता है। इसका कारण यह है कि हम अपने पूर्वजन्मों के कर्मों का सुख व दुःख रूपी फलों को भोगने के लिए इस संसार में आये हैं और हमारी ही भांति सभी मनुष्य व अन्य सभी प्राणी भी इसी निमित व प्रयोजन से संसार में परमात्मा द्वारा भेजे गये हैं। यदि कोई मनुष्य व प्राणी किसी दूसरे प्राणी के सामान्य जीवनयापन में बाधक बनता है तो वह ईश्वर के नियमों को तोड़ता है, ऐसा अनुभव होता है। ईश्वर की व्यवस्था को भंग करने वाले मनुष्यों को जन्म जन्मान्तर में उसके कर्मों का फल अवश्य मिलता है। जो ईश्वर की व्यवस्था को भंग करता है उसे निश्चय ही दुःख रूपी दण्ड मिलता है जिसमें मनुष्य से इतर निम्न योनियों में जन्म लेकर अपने पापों को भोगना पड़ता है। अत: सभी मनुष्यों को इस विषय पर विचार कर व आर्ष ग्रन्थों का अध्ययन व स्वाध्याय कर ईश्वर की व्यवस्था को जानने का प्रयत्न करना चाहिये और उसी भावना के अनुरूप अपने कर्त्तव्यों का निश्चय कर ईश्वर की वेदविहित आज्ञानुसार कर्म करने चाहिये। यदि ऐसा करेंगे तो निश्चय ही हम सुखी होंगे और संसार के सभी लोग भी सुखी व निरामय अर्थात् रोग व शोक रहित सुखी जीवन व्यतीत करेंगे।

हम देवयज्ञ करते हैं तो इससे मनुष्यों सहित सभी प्राणियों को लाभ होता है और हम अपने उस शुभ कर्म से इस जन्म व परजन्मों में ईश्वर से उसके फल प्राप्त कर लाभान्वित होते हैं। मातृ पितृ व आचार्यों सहित विद्वानों की सेवा सत्कार से भी हमें इस जन्म व परजन्मों में ईश्वर लाभ पहुंचाता है। गाय, बैल, भैंस, भेड़, बकरी, अश्व, कुत्ता आदि अनेक पशु समाज में हमें दृष्टिगोचर होते हैं। इनसे हमें अनेक प्रकार से लाभ पहुंचता है। यह लाभ एक प्रकार से हम पर इनका ऋण होता है जिसे हमेंबलिवैश्वदेव यज्ञ के रूप में उतारना होता है। इसे हम उनके प्रति अच्छा सहयोगपूर्ण व्यवहार करके पूरा कर सकते हैं। हमारे द्वारा उन्हें कष्ट न मिले अपितु हम उन्हें उनके भोजन आदि के द्वारा जितना सुख पहुंचा सके उतना ही उत्तम है। ऐसा अनुभव होता है कि हमारे कारण पशु-पक्षी व अन्य प्राणियों को किसी प्रकार का भी यदि सुख होता है तो वह हमारा शुभ कर्म होता है और परमात्मा के द्वारा हमें उस कर्म का फल इस जन्म व परजन्मों में जाति, आयु और भोग के रूप में मिलता है।

अत: हमें पशु-पक्षियों के प्रति विशेष रूप से सहिष्णु व संवेदनशील होना होगा और इसके लिए उनके प्रति मित्रता का भाव रखना होगा। ऐसा करके हम अपना इहलोक व परलोक सुखी व उन्नत बना सकते हैं। सृष्टि के आरम्भ से वैदिक धर्म के पूर्वजों की यही परम्परायें चली आ रही हैं। मांस व मदिरा का सेवन घोर पाप व तामसिक कर्म है जिसका परिणाम दुःख, रोग व अल्पायु सहित बुद्धि में विकार के रूप में ही होता है। इसके साथ जन्म जन्मान्तरों में निम्न योनियों में भ्रमण कर दुःख भोगने पड़ते हैं। यहां यह नियम लागू होता है जो जैसा बोयेगा वैसा ही काटेगा। बबूल का पेड़े बोयेंगे तो उसमें आम कदापि नहीं लगेंगे। पशुओं की हिंसा कर उन्हें दुःख पहुंचा कर हम कभी सच्चा सुख प्राप्त नहीं कर सकते। ऋषि दयानन्द जी ने बलिवैश्र्वदेव यज्ञ की विधि भी पंचमहायज्ञविधि पुस्तक में दी है। उसका अध्ययन कर इस यज्ञ में निहित भावना को आत्मसात कर निर्दिष्ट विधि के अनुरूप कर्म व क्रियायें करनी चाहिये और शंका होने पर विद्वानों से उसका समाधान करना चाहिये। चीटीं से हाथी तक सभी मनुष्य व अन्य प्राणियों में हमारे समान ही आत्मायें हैं। उन सबमें परमात्मा भी विद्यमान है, जो सबके कर्म फल भोग का साक्षी है और सबको सबके कर्मों का फलदाता है। अत: कर्म करते समय ईश्वर की सर्वव्यापकता व उसकी व्यवस्था को समझ कर ही कर्म करना चाहिये। यह ध्यान रखना चाहिये कि हमारा कोई भी कर्म उसकी व्यवस्था के विरुद्ध न हो। इसी के साथ हम इस लेख को विराम देते हैं।

आर्य मर्यादा साप्ताहिक पढ़ें और दूसरों को पढ़ाएं तथा लाभ उठाएं।

पृष्ठ 2 का शेष-शिक्षा और नैतिकता...

पालन कल्याण की कामना करने वाले के लिए आवश्यक है।

विद्या स्वयं ही दुष्टाचरण कर्ताओं से भयभीत रहती है अत: उनके पास जाकर भी उनका कल्याण न कर अहित साधन ही करती है। इस सम्बन्ध में निरुक्त को ये वचन दृष्टव्य हैं-

विद्या आचार्य से कहती है-हे आचार्य! मेरी रक्षा करो, मैं तुम्हारी शरण हूं। ईर्ष्यालु, कुटिल एवं दुराचारी को मेरा दान न करो-

विद्याह वै ब्राह्मणमाजगाम गोपाय मा शेवधिष्टेऽहमस्मि,

असूयकायनूजवेऽयताय न मा ब्रूया वीर्यमती यथा स्याम्।

पुनश्च-विद्या उन्हें भी फलीभूत नहीं होती है जो कि गुरुओं का आदर नहीं करते-

अध्यापिता ये गुरं नाद्रियन्ते विप्र वाचा मनसा कर्मणा

यथैव ते द गुरोर्भोजती-यास्तथैव तान्नभुनक्ति श्रुतंतत्।

विद्या पवित्र शुद्धाचरण कर्ता मेधावी ब्रह्मचारी को अपनी कृपा से अनुग्रहीत करती है-

यमेव विद्या शुचिमप्तमन्तं मेधाविनं ब्रह्मचर्योपसन्नम्।

यस्ते न द्रु ह्योत्कृतमच्चनाह तस्मै मा ब्रूया निधिपाय ब्रह्मन्निति निधि शेबधिरिति।।

भगवान् मनु का यह वचन भी दर्शनीय है-

उत्पादक ब्रह्म दात्रोर्गरीन्ब्रह्मद: पिता:।

ब्रह्मजन्म हि विप्रस्य प्रेत्य चेह च शाश्वतम्।।

उत्पादक पिता की अपेक्षा आचार्य अधिक महत्व का भागी होता है क्योंकि उत्पादक पिता ने तो केवल एक जन्म प्रदान किया है किन्तु इस भव सागर से संतरण करने के लिए आचार्य ही मानव का पूर्ण व पवित्र निर्माण करता है। योगदर्शन में पंचक्लेशों को अर्थात् दु:खों का वर्णन मिलता है जिनमें अविद्या का परिगणन सर्वप्रथम किया गया है-"**अविद्याऽस्मिता रागद्वेषाभिनिवेशा पञ्चक्लेशा**" वस्तुत: अविद्या मानव को पतन के गर्त में ले जाकर यथासम्भव दु:खों से पीड़ित करती है। अत: इन दु:खों से यदि मुक्ति प्राप्त करनी है तो ज्ञानार्जन करना चाहिए क्योंकि "**ऋते ज्ञानान्न मुक्ति**" ज्ञान की प्राप्ति का एकमात्र साधन शिक्षा सम्बन्धि भारतीय विचारधारा का अनुपालन ही है। क्योंकि विद्या पात्रापात्र का विचार कर ही अनुग्रह करती है।

अत: यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि शिक्षा का पूर्ण विकास राष्ट्र की संस्कृति के आधार पर ही हो सकता है क्योंकि उसकी पृष्ठभूमि में अपने देश के आदर्शो का वरदहस्त रहता है। जिस प्रकार एक पौधा अपने अनुकूल जलवायु पर एवं मिट्टी से पृथक् हो, अन्य भूमि पर विकसित नहीं हो सकता है उसी प्रकार किसी राष्ट्र की शिक्षा पद्धति अपनी संस्कृति की आधारशिला का परित्याग कर उन्नति नहीं कर सकती है। वैदिक काल की शिक्षा का पूर्ण विकास इसी पृष्ठभूमि पर हुआ है।

शिक्षा के आधुनिक सन्दर्भ में वैदिक शिक्षाकालीन सूत्रों की प्रासंगिकता आज और भी अधिक बढ़ जाती है। क्योंकि आज की शिक्षा प्रणाली में केवल मात्र जीविकोपार्जन की दृष्टि को ही महत्व दिया जाने लगा है। शिक्षा का यथार्थ उद्देश्य मानव के सर्वांगीण विकास की अवहेलना स्पष्ट परिलक्षित होती है। शिक्षा में नैतिकता का संपुट अवश्य दिया जाना चाहिए। प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री डॉ. राधाकृष्णन् के अनुसार-भारतसहित सारे संसार के कष्टों का कारण यह है कि शिक्षा का सम्बन्ध नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की प्राप्ति से न रहकर केवल मस्तिष्क के विकास से रह गया है, जिस शिक्षा में हृदय, मन और आत्मा की अवहेलना है उसे पूर्ण नहीं माना जा सकता, इन शब्दों पर सभी शिक्षाशास्त्रियों को गम्भीरता से विचार करना चाहिए। प्रस्तुत विषय की प्रासंगिकता नितान्त अनिवार्य है। इस पर गम्भीरता से सभी शिक्षाशास्त्रियों को विचार-विमर्श करना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास-डॉ. बलदेव उपाध्याय।

2. वैदिक साहित्य का इतिहास-डॉ. राजकिशोर सिंह

3. वैदिक वाग् ज्योति-शोधपत्रिका गुरूकुल कांगड़ी, जुलाई-दिसम्बर 2016

4. प्रज्ञा शिक्षण शोध रचना-शोध पत्रिका, अमरोहा।

5. संस्कृत साहित्य का इतिहास-डॉ. कपिलदेव द्विवेदी।

आर्य विद्वानों से अनुरोध

प्रतिवर्ष ऋषि बोधोत्सव के अवसर पर टंकारा समाचार का ऋषि बोधांक प्रकाशित किया जाता है। आगामी बोधोत्सव 12, 13, 14 फरवरी 2018 को समारोह पूर्वक आयोजित किया जा रहा है और इसी अवसर पर 'टंकारा समाचार' का ऋषि बोधांक प्रकाशित होगा।

आपसे प्रार्थना है कि आप अपने सारगर्भित अप्रकाशित लेख एवं कविता 10 जनवरी 2018 तक भिजवाकर कृतार्थ करें। लेख वेद, स्वामी दयानन्द, योग स्वास्थ्य आदि एवं अन्य जन उपयोगी प्रेरणादायक विषयों पर ही सीमित हों। ऐसा निर्णय किया है कि प्रकाशनार्थ सामग्री टाईप की हुई दो या तीन पृष्ठों से अधिक न हो, तो सुविधाजनक रहेगा। आप प्रकाशनार्थ सामग्री ईमेल tankarasamachar@gmail.com पर "चॉकमेन चाणक्य" टाईप में कम्पोज करके भी भिजवा सकते हैं। इसके लिये मैं आपका अत्यन्त आभारी रहूंगा।

-अजय सहगल, सम्पादक, टंकारा समाचार, ए-419 डिफेन्स कालोनी, नई दिल्ली-110024

टंकारा बोधोत्सव 12,13,14 फरवरी 2018

हर्ष का विषय है कि प्रतिवर्ष की भांति आगामी वर्ष में महर्षि दयानन्द जन्म स्थान टंकारा में ऋषि बोधोत्सव का आयोजन सोमवार, मंगलवार, बुधवार 12, 13, 14 फरवरी 2018 को किया जाएगा। आपसे निवेदन है कि आप यह तिथियों अभी से अंकित कर लेवें और इन तिथियों में अपनी आर्य समाज एवं संस्था का कोई कार्यक्रम न रखकर उक्त समारोह में अधिक से अधिक आर्यजनों के साथ टंकारा पधारने का कार्यक्रम बनायें। आपके आवास (आने की पूर्व सूचना देने पर) एवं भोजन की व्यवस्था टंकारा ट्रस्ट की ओर से होगी।

निवेदक-राम नाथ सहगल, मन्त्री टंकारा ट्रस्ट, आर्य समाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-11001

वेद प्रचार दिवस का आयोजन

आर्य समाज गौशाला रोड फगवाड़ा के तत्वावधान में 24 दिसम्बर 2017 दिन रविवार को सुबह 8:30 से 11 बजे तक आर्य मॉडल सी. सै. स्कूल गौशाला रोड के प्रांगण में स्व. मास्टर मनोहर लाल जी चोपड़ा की पुण्य स्मृति में वेद प्रचार दिवस का आयोजन किया जा रहा है जिसमें आर्य समाज के विद्वान् सन्यासी, स्वामी पूर्णानन्द जी सरस्वती मथुरा वाले वेदों में यज्ञ की महिमा एवं जीवन दर्शन विषय पर मार्गदर्शन देंगे। कृपया कार्यक्रम में शामिल होकर पुण्य के भागी बनें।

-डॉ. यश चोपड़ा महासचिव आर्य समाज

वार्षिक उत्सव एवं स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस

आर्य समाज अड्डा होशियारपुर जालन्धर का वार्षिक उत्सव एवं स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस का आयोजन दिनांक 18 दिसम्बर 2017 से 24 दिसम्बर 2017 तक किया जा रहा है। इस अवसर पर आर्य जगत के विद्वान् महात्मा चैतन्यमुनि जी के प्रवचन तथा माता सत्याप्रिया एवं श्री राजेश अमर प्रेमी जी के मधुर भजन होंगे। 24 दिसम्बर को आर्य समाज अड्डा होशियारपुर एवं महर्षि दयानन्द मठ ढन्न मोहल्ला के संयुक्त तत्वावधान में स्वामी श्रद्धानन्द जी का बलिदान दिवस मनाया जाएगा। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महोपदेशक पं. विजय कुमार जी शास्त्री एवं श्री सुरेश शास्त्री जी मुख्य वक्ता होंगे। कार्यक्रम प्रतिदिन प्रात: 7:30 से 9:15 बजे तक तथा रात्रि 7:45 से 9:15 बजे तक चलेगा। आप सभी धर्मप्रेमी महानुभावों से प्रार्थना है कि इस अवसर पर सपरिवार पधार कर धर्मलाभ प्राप्त करें तथा विद्वानों के मार्गदर्शन से अपने जीवन को धन्य बनाएं।

-रमेश कालड़ा मन्त्री आर्य समाज अड्डा होशियारपुर

आर्य समाज बंगा का 36वां वार्षिक उत्सव हर्षोल्लास से सम्पन्न

आर्य समाज बंगा के 36वें वार्षिक उत्सव का ज्योति प्रज्वलित कर शुभारम्भ करते हुये आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मंत्री श्री विनोद भारद्वाज, अधिष्ठाता साहित्य विभाग श्री सुरेन्द्र मोहन तेजपाल, आर्य समाज बंगा के संरक्षक श्री शादी लाल जी महेन्दु एवं अन्य जबकि चित्र दो में मंच पर प्रवचन करते हुये श्री सुरेश शास्त्री जी।

आर्य समाज बंगा जिला शहीद भगत सिंह नगर पंजाब का 36वां वार्षिकोत्सव एवं चतुर्वेद शतक यज्ञ दिनांक 30 नवम्बर से 3 दिसम्बर 2017 तक बड़ी श्रद्धा एवं धूमधाम से मनाया गया जिसमें कुरुक्षेत्र की धरती से पधारे पूज्य स्वामी विदेह योगी जी महाराज ने चारों वेदों के सौ सौ मंत्रों द्वारा लगातार चारों दिन अलग अलग 16 यजमानों द्वारा यज्ञ में आहूतियां डलवाई तथा यज्ञ की महानता एवं लाभ के बारे में बताया। अन्तिम दिन 3 दिसम्बर दिन रविवार को सभी यजमानों से पूर्णाहूति सम्पन्न करवाई तथा फलों का प्रसाद देकर आशीर्वाद प्रदान किया। यज्ञ शेष लेकर सभी भाई एवं बहिन समूह रूप से ध्वजारोहण के लिये बाहर आए।

पानीपत से पधारी श्रीमती कैलाशरानी मनोचा धर्मपत्नी श्री महेन्द्र मोहन मनोचा प्रधान आर्य समाज पानीपत का बंगा के सदस्यों ने दोशाला एवं पुष्प गुच्छ तथा स्मृति चिन्ह देकर सम्मान किया। उपरान्त बहिन जी ने अपने कर कमलों द्वारा ध्वजारोहण किया तथा ध्वज गीत प्रस्तुत किया गया। प्रातःराश के उपरान्त ठीक 11.00 बजे सम्मेलन का शुभारम्भ (महर्षि दयानन्द के सपनों का भारत) श्री महेन्द्र मोहन मनोचा प्रधान आर्य समाज पानीपत की अध्यक्षता में किया गया जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में पधारे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मंत्री श्री विनोद भारद्वाज जी, साहित्य विभाग के अधिष्ठाता श्री सुरेन्द्र मोहन तेजपाल जी, सम्मेलन के अध्यक्ष श्री महेन्द्र मोहन मनोचा, आर्य समाज बंगा के संरक्षक श्री शादी लाल जी महेन्दु आर्य समाज बंगा के प्रधान श्री विनोद शर्मा, मंत्री श्री श्याम लाल आर्य आदि ने ज्योति प्रज्वलित करके सम्मेलन का शुभारम्भ किया। सर्वप्रथम मथुरा नगरी से पधारे स्वामी डा. पूर्णानंद जी सरस्वती ने अपने मधुर भजनों द्वारा भगवान का धन्यवाद एवं ऋषि गुणगान किया। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के वेदोपदेशक श्री सुरेश शास्त्री जी ने अपने ओजस्वी प्रवचन देते हुये समूह जनता में जोश भरा तथा आज और कल की परिस्थिति पर सभी को सोचने पर मजबूर कर दिया। चण्डीगढ़ से पधारे पंडित उपेन्द्र आर्य भजनोपदेशक के मधुर भजनों द्वारा आज का युवा कल का राष्ट्र प्रहरी तथा गृहस्थ और आर्य समाज के विषय को लेकर भजन सुनाए। अन्त में पूज्य स्वामी विदेह योगी जी महाराज ने अपने ओजस्वी प्रवचन द्वारा 16 संस्कारों का वर्णन करते हुये तथा समाज को किस तरह से एक धागे में पिरोकर आगे ले जाया जा सकता है, जिसका स्वामी जी ने सपना देखा और आर्य समाज की स्थापना की आदि पर अपने विचार रखते हुये वेदों की ओर लौटों पर लगभग 45 मिनट प्रवचन देते हुये जनता को संदेश दिया जिसका समूह जनता पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा।

आर्य समाज के प्रांगण में पिछले लगभग 35 वर्षों से लगातार चल रहे मुफ्त सिलाई कढाई केन्द्र में इस बार 17 छात्राओं को उत्तीर्ण होने पर प्रमाण पत्र वितरित किया गया और कुल 15 गरीब एवं असहाय छात्राएं जोकि आर्य समाज के प्रांगण में मुफ्त सिलाई सीख रही हैं, सिलाई मशीनें देकर उनकी सहायता की गई। अन्त में अध्यक्ष महोदय ने अपने अध्यक्षीय भाषण में आर्य समाज के सामाजिक धार्मिक किये जा रहे कार्यों की भूरि भूरि प्रशंसा की तथा हर प्रकार का सहयोग देने का वचन दिया। श्री शादी लाल महेन्दु संरक्षक आर्य समाज बंगा ने सभी आए हुये अतिथियों एवं सन्यासियों विद्वानों का धन्यवाद किया। इस पवित्र कार्य को सफल बनाने में सबसे बड़ा योगदान पंडित श्याम लाल आर्य मंत्री आर्य समाज बंगा का रहा जिन्होंने सारे कार्यक्रम की रूपरेखा विद्वानों को आमंत्रण, मंच संचालन तथा सभी जिम्मेदारियों को निभाया। उनके सहयोगी श्री विनोद शर्मा प्रधान, श्री नरेन्द्र गोगना, श्री राम भरोसे आर्य, श्री देवेन्द्र सूदन, डा. वी.के. अरोडा नवांशहर, श्री राम मिलन, श्री राकेश सूरी, श्री देव राज अरोडा, सुशील कुमार आर्य, दिनेश कुमार, श्रीमती रक्षा रानी, श्रीमती प्रवीण गांधी, श्रीमती नीलम गोगना, श्रीमती प्रेम लता शर्मा, श्रीमती गीता सूदन आदि का पूरा पूरा सहयोग रहा। अन्त में शान्ति पाठ के पश्चात प्रसाद के रूप में ऋषि लंगर सबने सामूहिक रूप से ग्रहण किया। परमात्मा के आशीश से प्रोग्राम अति सफल रहा।

श्याम लाल आर्य मंत्री

आर्य समाज जवाहर नगर लुधियाना वार्षिक उत्सव सम्पन्न

आर्य समाज जवाहर नगर लुधियाना के वार्षिक उत्सव के अवसर पर हवन यज्ञ करते एवं चित्र दो में प्रवचन सुनते हुए आर्य जन।

आर्य समाज जवाहर नगर लुधियाना का वार्षिक उत्सव 15 से 17 दिसम्बर 2017 को बड़ी श्रद्धा, उत्साह व उल्लास के साथ मनाया गया। कार्यक्रम का शुभारम्भ आर्य समाज के सुसज्जित सत्संग भवन में 15 दिसम्बर प्रातः मंगल यज्ञ से हुआ जिसके ब्रह्मा आर्य समाज के पुरोहित पं. बाल कृष्ण शास्त्री थे। 15 एवं 16 दिसम्बर को क्रमशः श्रीमती पायल एवं श्री विवेक सेठ जी, श्रीमती सुनीता एवं श्री संजीव सरीन जी, श्रीमती अनु एवं रवि कपूर जी तथा अन्य सभी यजमानों ने बड़ी श्रद्धा से यज्ञ में आहूतियां प्रदान की। उत्सव का कार्यक्रम प्रतिदिन प्रातः एवं रात्रि के सत्रों में चला। आर्य जगत के प्रख्यात वैदिक विद्वान आचार्य चन्द्र पाल जी शिक्षा शास्त्री (गाजियाबाद) के उत्तम व प्रेरणा दायक प्रवचन हुये। जिसमें उन्होंने कहा कि 24 घंटे आंतरिक यज्ञ करते हुये हमें अपने कर्म व व्यवहार को ठीक रखना चाहिये। प्रातः सायं ब्रह्म यज्ञ के चारों भागों अर्थात स्तुति, प्रार्थना, उपासना तथा धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन के साथ साथ स्वयं का अर्थात आत्मिक चिन्तन भी करना चाहिये। ईश्वर का गुणगान करते हुये उनके गुणों को अपने जीवन में धारण करें। सहारनपुर से पधारे पं. प्रताप आर्य जी ने मधुर स्वर में भजनों को सुना कर सब को आनन्दित किया। श्रीमती अनुपमा गुप्ता, विजय सरीन, जगदीश कपूर व अनिल कुमार जी ने भी एक एक भजन प्रस्तुत किया। उत्सव का समापन समारोह 17 दिसम्बर रविवार को हुआ। प्रातः साढ़े आठ बजे यज्ञ आरम्भ हुआ। चार यज्ञ कुंडों पर बैठे यजमानों ने बड़ी श्रद्धा से यज्ञ में आहूतियां प्रदान की। यज्ञ की सुगन्धि एवं वेद मंत्रों के उच्चारण से सारा वातावरण आनन्दमय बन गया। इस शांत व पवित्र वातावरण में यज्ञ की पूर्णाहूति की गई। सभी सजमानों को विद्वानों द्वारा आशीर्वाद व धार्मिक पुस्तकें तथा प्रशाद रूप में फल आदि दिये गये। सब को यज्ञ शेष तथा प्रातःराश वितरित किया गया। यज्ञ के पश्चात लुधियाना नगर के प्रतिष्ठित गुलाटी इंडस्ट्रीज के मालिक श्री अश्चर्ज लाल जी गुलाटी ने परिवार सहित ज्योति प्रज्वलित की। श्री बृजमोहन जी अरोड़ा सपत्नीक एवं उनके सुपुत्र डा. विनीत अरोडा व पुत्रवधू डा. दिव्या अरोडा द्वारा ध्वजारोहण किया गया। श्री श्रवण बत्रा जी ने ध्वज गीत गाया। सुन्दर बैंड की ध्वनि ने सभी को आकर्षित किया। आर्य समाज की ओर से दोनों परिवारों को सम्मान स्वरूप स्मृति चिन्ह भेंट किये गये। मंच का संचालन करते हुये आर्य समाज के महामंत्री श्री अनिल कुमार व प्रधान डा. विजय सरीन जी ने विद्वानों व आर्य जनता का अभिनन्दन किया तथा पं. प्रताप आर्य व हरपाल आर्य को भजन प्रस्तुत करने के लिये आमंत्रित किया। उन्होंने अपने भजनों की कड़ी प्रभु भक्ति के भजन से शुरू किया। इस उत्सव में एस.डी.पी. कालेज फार वूमन लुधियाना की पांच छात्राओं को बी.ए. फाइनल की परीक्षा

(शेष पृष्ठ 4 पर)

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसक स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। **E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org**
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।